International Research Vision (Int. Res. Vn.)
ISSN: 2454-3721
Volume 3 Issue 1: 33-35, 2017

स्वातंत्र्योत्तर काव्य नाट्यों का विकासात्मक अध्ययन

राजमल नागर
अतिथि विद्वान हिन्दी ए शास. महा. खिलचीपुर जिला राजगढ़ (ब्यावरा) म.प्र.
Email rajmalnagar12@gmail.com

सारांश

स्वातंत्र्योत्तर काव्य– नाटकों की महत्वपूर्ण उपलब्धि यह कि इनमें मिथकों के माध्यम से युगीन चेतना स्पंदित हुई है। रचनाकारों ने पौराणिक कथाओं को यथार्थ, सामयिक और बुद्धिसंगत रुप देने का प्रयास किया है। पात्र एवं चरित्रांकन की दृष्टि से इन नाटकों में पात्रों के आंतरिक संघर्ष को विविध मनोभावों को मार्मिकता से उद्घाटित किया गया है।

शीर्षक विश्लेषण

काव्य नाटक की परम्परा की खोज हमें सुदूर अतीत में ले जाती है। प्राचीन साहित्य में सैद्धांतिक पद्धति पर आधारित काव्य–नाटकों का अभाव भले ही रहा हो परन्तु उसकी परम्परा का क्षीण आभास निरन्तर प्राप्त होता है। इस परम्परा के अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है –

अ. संस्कृत में काव्य – नाटको की परम्परा।

ब. मध्ययुग में काव्य – नाटकों की परम्परा।

स. आधुनिक युग में काव्य – नाटको की परम्परा।

आधुनिक युग को पाँच भागों में विभाजित किया गया है–

1. भारतेन्दु पूर्व काव्य नाट्य।
2. भारतेन्दु युगीन काव्य नाट्य।
3. प्रसाद युगीन काव्य नाट्य।
4. स्वातंत्र्योत्तर काव्य नाट्य।
5. लोकाख्यान परम्परा और प्रमुख काव्य नाट्य।

4. स्वातंत्र्योत्तर काव्य नाट्य :–

भयंकर रक्तचाप कठोर बर्बरता तथा अराजकता का अन्त भारत के विभाजन के साथ ही 15 अगस्त 1947 को हुआ और 26 जनवरी 1950 को भारतवर्ष एक गणतंत्रात्मक राज्य घोषित किया गया। शरणार्थियों की समस्या, साम्प्रदायिक दंगे, दुर्भिक्ष, महामारी, बेकारी, मंहगाई, मुनाफाखोरी, चोर बाजारी, अशांति, अनैतिकता और निराशा का साम्राज्य छा गया। स्वतंत्रता के बाद पुनर्निर्माण विकास योजनाएँ और पड़ोसी देशों के युद्ध इन सबका तांता छा गया। विचारधाराओं का विकास हुआ। निराशा और विद्रूपता के चित्रण के पाश्चात्य अनुकरण का स्पष्ट समर्थन किया जाने लगा और समाज के प्रत्येक पक्ष का समस्या पर नाटककार की पकड़ और मजबूत हुई। नाटक का बहुआयामी दृष्टिकोण अग्रसर हुआ। गीतिनाट्य, भाव–नाट्य, प्रतीक–नाट्य जैसे अनेक रुपक विधाओं की खोज और आधुनिकता के समन्वय के तत्व दृष्टिगोचर होने लगे।

भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात स्वातंत्र्य पूर्व की गीति नाट्य परम्परा की एक क्षीण धारा हमें 1952 तक भी मिलती है जिसमें रामसिंह राय **'**उन्मुक्त**'** कृत **'**मांस का विद्रोह**'** (1949)ए उदयशंकर भटट का **'**कालिदास**'** (1950)ए सुमित्रानंदन पंत का **'**रजत शिखर**'** (1951)ए एवं केदारनाथ मिश्र **'**प्रभात का

स्वर्णोदय' इनमें तीन लघु रचनाएँ संकलित है 'स्वर्णोदय'ए 'अंगुलिमाल' और 'मानव निश्चय ही लौटेगा' के साथ ही रामधारीसिंह दिनकर 'मगध महिमा' (1950) तथा हिमालय का संदेश (1951) एवं भगवतीचरण वर्मा का 'महॉकाल' (1952) रखे जा सकते है।

उदयशंकर भट्टकृत 'एकला चलो रे' (1948) महात्मां गांधी की नौआरवली यात्रा पर आधारित रुपक है जिसे पद्य नाटक और गीति नाटक भी कहा गया है कालिदास की ध्वनि रुपक है जिसमें कालिदास के जीवन की पृष्ठभूमि में उनकी रचनाओं का परिचय दिया गया है। इसी में 'मेघदूत' और 'विक्रमोर्वशीय' भी संग्रहित है जो कालिदास कृत रचनाओं के रेडियो रुपान्तर है। गीतों में कलात्मकता है किन्तु शिल्प की दृष्टि से यह पद्य नाटक नहीं हैं। भट्ट जी ने प्रभावोत्पादक काव्य नाटकों में 'अशोक वन बन्दिनी' (1959) में तीन अन्य– 'सन्त तुलसीदास', गुरुद्रोण का अन्तर्निरीक्षण' तथा 'अश्वत्थामा' काव्य नाटक भी संग्रहित है।

'अशोक वन बन्धिनी' का आरम्भ सीताहरण के बाद होता है और हनुमान की वापसी के साथ ही कथानक समाप्त होता है। नारी के उदात्त रुप का उद्घाटन सीता की मनः स्थितियों के द्वंद्व के माध्यम से कवि ने किया है 'सन्त तुलसीदास' में चरित्र की प्रधानता है। तुलसीदास के विद्रोही चरित्र में घटनाएँ समाहित है। रत्नावली के मर्माहित वचनों से तुलसी विरागी हो जाते है। तुलसी के विदाई के बाद रत्नावली के द्वंद्व का मार्मिक चित्रण है।

'गुरु द्रोण का अन्तर्निरीक्षण' में द्रोणाचार्य के जीवन के चित्रण है। द्रोणाचार्य अपने अतीत का सिंहावलोचन करते हैं कि उनके किए गए कुछ कार्यो, छल, स्वार्थ, और विवेकहीनता थी। जिसे प्रत्यक्षतः उन्होने वैसा नहीं समझा। इस भूमि में यह रचना अर्न्द्वन्द्व प्रधान है। 'अश्वत्थामा' में मुख्य चरित्र अश्वत्थामा प्रतिहिंसा का प्रतीक है और रात्रि के सन्नाटे में पाण्डव शिविर में जाकर सोए हुए निहत्थे लोगों की हत्या करता है। अश्वत्थामा और अर्जुन का प्रलयंकारी युद्ध होता है। अश्वत्थामा मानव के प्रति हिंसाजन्य पतन का वीभत्स रुप है जो अत्यंत मनोवैज्ञानिक ढंग से उद्घाटित हुआ है। ये सभी काव्य–नाटक अभिनेय और मंच की दृष्टि से लिये गये है।

'नहुषनिपात' में नहुष की कथा है। नहुष इन्द्र का पद प्राप्त करके शची का सौन्दर्य पर मुग्ध होकर अपना संतुलन खो बैठता है। नहुष की कामेच्छाएँ उभरती है और नहुष को पतन की और ले जाती है। नहुष की मानसिक स्थिति को मनोवैज्ञानिक आधार पर नाटकीय परिस्थितियों की उद्भावना के लिए कवि ने पौराणिक कथा का अच्छा प्रयोग किया है। इसे भी 'रेडियो रुपक' कहा गया है। भट्ट जी को अपनी उपर्युक्त रचनाओं में पर्याप्त सफलता मिली है और अपनी इन रचनाओं को उन्होने भावनाट्य, गीतिनाट्य, ध्वनि रुपक, रेडियो रुपक, पद्य नाटक जैसे विविध नाम भी दिये है। अतः वे किसी एक नाम पर स्थिर नही हो सके। "फिर भी एक ही विधा के लिए इतने नामों के प्रयोग में उपयुक्त नाम की खोज की दिशा में प्रयत्नशील अवश्य लक्षित होती है।" [1]

सुमित्रानंदन पंत ने अपने काव्य–नाटकों की रचना विषेश रुप से रेडियों के लिये ही की है। जिनके 'शिल्पी' 'रजत शिखर' और 'सौवर्ण' तीन संग्रह है। 'शिल्पी' के कथानक में गठन और क्रमिक विकास का अभाव है। पात्र आदर्शो की प्रतिभाएँ है और एक जैसे स्वर में बाते करते है। 'रजत शिखर' में छः काव्य रुपक संग्रहित है। 'रजत शिखर' मनुष्य की अन्तश्चेतना का प्रतीक है। 'फूलों के देश में' अध्यात्म और भौतिकता का संघर्ष है। 'उत्तरशती' में पुरुष स्वर और स्त्री स्वर में युद्ध की विभीषिका का और मांगलिकता का चित्रण है। 'शुभ्र पुरुष' में गांधी को युग की विनम्र श्रद्धांजलि का चित्र प्रस्तुत किया गया है। 'विद्युतवसना' स्वाधीनता के चेतना का रुपक है। 'शरतचेतना' प्राकृतिक सौन्दर्य का काल्पनिक रुपक है।

'सौवर्ण' पंत के काव्य रुपकों का तीसरा संग्रह है और इसमें 'सौवर्ण' संक्रमण–कालीन मानव मूल्यों के विकास का प्रतीक रुपक है तथा स्वप्न और सत्य युग संघर्ष की अभिव्यक्ति है। इन रचनाओं में काव्यत्व और रुपकत्व का अभाव होते हुए भी पन्तजी ने उन्हें 'काव्य रुपक' कहा है। स्पष्टता ये सभी रचनाएँ रेडियों में प्रसारण की दृष्टि से लिखी गई थी। काव्य–नाटक के स्वरुप विधान

के बारें में डॉ. सिद्धनाथ कुमार की मान्यताओं का विषेश महत्व है। उन्होने काव्य–नाटक के सैद्धांतिक स्वरुप, क्षेत्र और संभावनाओं पर अत्यंत प्रशंसनीय कार्य किया। काव्य–नाटक की अन्योन्य विशेषताओं का बौद्धिक विवेचन करते हुए उन्होने लिखा है कि "मेरा विश्वास है कि सामाजिक समस्याओं से जूझने का काम, काव्य नाटक भी कर सकता है, वह गद्य नाटक के लिए कठिन है।"[2] इन नाटककारों ने 'काव्य नाटक' को संवेदना एवं शिल्प की दृष्टि से उत्कर्ष की चरमसीमा तक पहुँचा दिया है इनमें अग्रगण्य काव्य–नाटककार है। डॉ. सिद्धनाथ कुमार। उनकी 'सृष्टि की साँझ तथा अन्य काव्य–नाटक रचना में 'सृष्टि' की साँझ' के साथ अन्य काव्य–नाटक 'लौहदेवता' 'विकलांगों का देश', 'बादलों का शाप' एवं 'वातायन–खोलों' है। डॉ. सिद्धनाथ कुमार की रचनाओं के बारे में शांतिमलिक ने लिखा है– "निस्संदेह काव्य सौष्ठव, अनुभूति की गहराई, मार्मिकता तथा जीवन के सहज तत्वों एवं नाटकीयता की दृष्टि से सिद्धनाथ कुमार की रचनाएँ उत्तम मानी जा सकती है।"[3] 'सृष्टि की साँझ' बीसवीं सदी के युद्ध 'लौहदेवता' में यंत्र युग की उपलब्धिपूर्ण दुर्बलताये, 'संघर्ष' में कलाकार की कला साधना और दायित्वों निर्वाह 'विकलांगों का देश' में व्यक्तित्व के हास से ग्रस्त सामाजिक व्यवस्था, 'बादलों का शाप' में सामाजिक आर्थिक विषमता की स्थिति तथा वातायन खोलों में मनुष्य की जीवनकांक्षा की घुटन की ओर संकेत किया गया है।

इसी क्रम में भगवतीचरण वर्मा का 'महाकाल' (1952) भी आता है। रामधारी सिंह दिनकर ने रेडियों प्रसारण के लिए दो लघु पद्य नाटक की रचना की 'मगध महिमा' और 'हिमालय का संदेश' दिनकर जी ने अपने गौरवशाली इतिहास के माध्यम से विश्वशांति को रेखांकित किया है। आरसी प्रसाद सिंहकृत संगीत रुपक 'मदनिका', 'धूप–छाँह', 'नवान्न मंगल और ऋतुराज' के माध्यम से जीवन का उल्लास चित्रित हुआ है। हंस कुमार तिवारी कृत ध्वनि रुपक 'पुनरावृत्ति' में पाँच रचनाएँ संकलित है जिनमें काव्यत्व और गेयता की प्रधानता है।

नरेन्द्र शर्मा ने 'उत्तरजय' (1964) और विनोद रस्तोगी ने 'सूतपुत्र' (1967) पद्य नाटक लिखे। नरेश मेहता के 'अग्नि देवता' में अग्नि पूजा सभ्यता का विकास चित्रित है। प्रभाकर माचवे का काव्य रुपक – 'विन्ध्याचल' और 'रामगिरि' मुख्य है। इन दोनों रुपकों के माध्यम से लेखक के पर्वतों के मानवीकरण द्वारा उनके पौराणिक एवं ऐतिहासिक महत्व का प्रतिपादक किया है। इसी क्रम में कर्तार सिंह दुग्गल ने 'ऊपर की 'मंजिल' और 'अमानत' जैसे लघु नाट्य लिखे दोनों एक पात्रीय है। प्रफुल्ल चन्द्र ओझा का काव्य रुपक 'वृन्दावन' कृष्ण के जीवन पर आधारित है। डॉ. धर्मवीर भारती का 'सृष्टि का आखिरी आदमी' भी रेडियो छन्द नाट्य है जिसमें नई सृष्टि का संकेत है।

स्वतंत्रता के पश्चात नई कविता में प्रयोगशीलता की प्रवृत्ति के दर्शन होते है। प्रयोग काव्य सृष्टि का साधन रुप में ही स्वीकृत किया गया था। प्रयोग की प्रवृत्ति के बिम्बों, प्रतीकों उपमानों का विलक्षण प्रयोग किया। शमशेर बहादुर सिंह ने मुक्त छन्द में प्रतीक चित्र और स्वछन्द चेतना प्रवाह की पद्धति का अनुसरण किया तो धर्मवीर भारती के पौराणिक तथा नवीन प्रतीकों को नये युगबोध के विविध संदर्भ में संयुक्त करके भाषा को बढ़ाया और संवेदना के नये आयामों का उद्घाटन किया। "इस प्रकार नई कविता चिन्तागत अनिश्चय और सांस्कृतिक बोध की शून्यता की परिचायक खण्डित बिम्ब सृष्टियों की परिपाटी से निकलकर आधुनिक परिवेश की गम्भीर समस्याओं और संवेदनाओं को ऐतिहासिक और पौराणिक आख्यानों के व्यापक संदर्भो में व्यक्त करने की दिशा में प्रवृत्त हुई।"[4] स्पष्टता समकालीन जटिल युगबोध काव्य नाटक के रुप में नई कविता ही अभिव्यक्त कर सकी।

संदर्भ सूची

1. डॉ. हरिशचन्द्र वर्मा : नई कविता के नाट्य काव्यश, पृष्ठ–106.
2. सृष्टि की साँझ तथा अन्य काव्य–नाटकश डॉ. सिद्धनाथ कुमार पृष्ठ–19.
3. हिन्दी नाटकों की शिल्पविधि का विकासश डॉ. शांति मलिक, पृष्ठ–499.
4. डॉ. हरिशचन्द्र वर्मा– नई कविता नाट्य काव्यश, पृष्ठ–33.